ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-3* Issue-1*February- 2018
Innovation The Research Concept

महिला सशक्तिकरण : बदलते सामाजिक परिवेश में महिलाओं की स्थिति एवं स्वरूप

रेणू मित्तल
एसोसिएट प्रोफेसर,
राजनीति विज्ञान विभाग,
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय,
अलवर, राजस्थान

सारांश

महिला सशक्तिकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा समाज के विकास की प्रक्रिया में राजनीतिक संस्थाओं के द्वारा महिलाओं को पुरूषों के बराबर मान्यता दी जाती है। लड़की को पराया धन की संज्ञा देकर उसके सभी अधिकारों का हनन हो जाता है। लड़कियों के साथ हर स्तर पर भेदभाव किया जाता है। खाना, पहनावा, प्यार एवं स्नेह, शिक्षा, स्वास्थ्य, व्यवसाय आदि में खुला भेदभाव आज भी देखा जा सकता है।

मुख्य शब्द : महिला सशक्तिकरण, सामाजिक परिवेश

प्रस्तावना

यह सही है कि किसी समय भारतीय समाज के चिंतन का आधार 'यत्र नारयस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता' रहा है। लेकिन पिछले सैकड़ों सालों से समाज में रूढ़िवादी परम्पराओं, मान्यताओं और अंधविश्वासों का वर्चस्व रहा है। ऐसे वातावरण में महिलाओं का उत्पीड़न, शोषण और उपेक्षा चरम सीमा पर रही है। यह सही है कि समय के साथ सब कुछ बदल जाता है और बदलाव की यह हवा महिलाओं को भी प्रभावित कर रही है।

वर्तमान में महिलाएँ निरक्षरता, निष्क्रियता, विवाह के बाद पराधीनता, पति ही परमेश्वर मान्यता के दबाव, सास–ननद के तानों, घुंघट तथा दोयम दर्जे की हैसियत, लज्जा ही श्रृंगार, ममता ही मार्यादा एवं पर–पुरूष से सम्पर्क पाप जैसी परम्पराओं और मान्यताओं को खुले रूप में नकारने लगी है। आज तलाक दो तरफा प्रवाह माना जाने लगा है। सिनेमा, नाटक और नौकरी करने वाली महिला को आमतौर पर अन्यथा नजर से नहीं देखा जाता है। महिला को बॉस के रूप में स्वीकारा जाने लगा है और पुलिस, फौज और खुफिया तंत्र आदि सभी पुरूष–प्रधान क्षेत्रों में भी महिलाएँ अपना स्थान बनाने लगी हैं। ऐसे सभी परिवर्तन प्रगतिवादी और सकारात्मक ही कहे जाऐंगे लेकिन ऐसे परिवर्तनों के साइड इफैक्ट कम नहीं है।

आज परिवारों में विखंडन, निजी जीवन में उच्छश्रृंखलता, सामाजिक मर्यादाओं में रहने से असहजता, तलाक देने में शीघ्रता, पारिवारिक सम्बन्धों में अनैतिकता, पहनावे में दिखावा और नग्नता, स्वभाव में कृत्रिमता, सोच में स्वार्थपरता, दृष्टिकोण में अधार्मिकता, धर्म और आध्यात्मके में पाखण्डता और शिक्षा में अस्वाभाविकता तेजी से बढ़ती जा रही है। प्रष्न उठता है इसके लिए कौन, कितना और कैसे जिम्मेदार है ?

अध्ययन का उद्देश्य

ऐसे अनेकों प्रश्नों के उत्तर की प्राप्ति की लालसा प्रस्तुत पत्र में 'महिला और बदलता सामाजिक परिवेश' में शालीनता और अश्लीलता के भँवरजाल, बालिका भ्रूण हत्या के कलंक और आतंकित करने वाला भविष्य, कम उम्र की माताओं का मातम, बचपन को बिसारती मजबूरी, वृद्ध महिलाओं की व्यथा, विवाह संस्था को मिल रही चुनौतियाँ, परिवर्तन से प्रदूषित होता सामाजिक वातावरण एवं परिवर्तन आधारित एच.आई.वी. एड्स का आतंक जैसे विषयों का वर्तमान के संदर्भ और भविष्य की सम्भावनाओं के सम्बन्ध में वस्तुनिष्ठ और तर्कपूर्ण विश्लेषण किया गया है।

हमें न किसी पर जय चाहिये, न किसी से पराजय, न किसी पर प्रभुत्व चाहिए, न किसी का प्रभुत्व। केवल अपना वह स्थान जिसके बिना हम समाज का उपयोगी अंग बन नहीं सकेंगी। हमारी जागृत और साधन संपन्न बहिनें इस दिशा में विशेष महत्वपूर्ण कार्य कर सकेंगी, इसमें सन्देह नहीं।

–महादेवी वर्मा

तुमसे ही घर–घर कहलाया, घर की शोभा, 'गृहलक्ष्मी', 'अन्नपूर्णा' जैसे न जाने कितने विशेषणों से औरतों को नवाजा गया, लेकिन मध्यवर्गीय घरों में चारदीवारी में रहते हुए औरत पर क्या गुजरती रही, न तो किसी ने देखा और न ही उस पर सवाल उठाया। औरत के मुंह पर तो शालीनता संस्कृति के नाम पर चुप्पी के ताले जड़ दिए गये थे।

महिलाओं के मुद्दों की बात की जाती हैं तो ऐसा लगता है कि पुराने निबन्ध को नए सिरे से लिखा जा रहा है। निबन्ध की एक शुरुआत होती है, एक अंत होता है, उपसंहार होता है। इसका एक सार भी निकलता है, पर मेरी नजर में ऐसी बहस से कोई सार निकलता नजर नहीं आता है। महिलाओं में मुद्दे पर मीडिया का ध्यान जाना और उसकी वजह से किसी नतीजे पर पहुंचना दो अलग चीजें हो सकती हैं।

देश में यूं तो महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने के लिए सरकार की ओर से कानून बनाने के दावे तो किए जाते रहे हैं पर क्या ये कानून असल में भी मददगार होते है ? कई मामलों में ये देखने में आता है कि कानून के प्रावधान बस्ते में ही बँधे रह जाते हैं और पीड़ित या फिर उसके परिवार को दर–दर की ठोकरें खाने को मजबूर होना पड़ता है। कानून तो है लेकिन इसकी पालना कौन कराएगा ?

मीडिया की वजह से जनता में भी सजगता आई है। लोग घटनाओं के विरोध में घर से बाहर निकलने लगे है, पर यदि लोग किसी घटना में मौत होने के बाद विरोध करते हैं बजाए कि जब पीड़िता जिन्दा होती है तो समाज उसके साथ कैसे व्यवहार करता है।

इस आधार पर समाज का आकलन होना चाहिए। मेरी दृष्टि में इस आधार पर भारतीय समाज परिपक्व नहीं है। समाज में बहुत सारे मामले सामने भी नहीं आ पाते हैं, जो मामले सामने आ जाते हैं उनका असली दर्द तो कार्यवाही शुरु होने के बाद होता है। पीड़ित को समाज के तीनों, मंहगी न्यायिक प्रक्रिया का सामना करना पड़ता है। स्त्री–पुरुष संबंधों के बारे में हम समाज के रुप में संक्रमण काल से गुजर रहे हैं। महिलाओं के विरूद्ध अपराधों पर कार्रवाई करना सरकार का दायित्व है। स्त्रियों और बच्चियों के प्रति कुत्सित सोच रखने वाले हिंसक प्रवृत्ति के लोग हमारे इसी समाज में रहते है, उन्हीं लोगों के बीच में रात–दिन उठने–बैठते हैं जो यह कहते हैं किसी अपराध की शिकार बनी स्त्रियां ही खुद दोषी हैं उन्हें इतनी रात को नहीं निकलना चाहिए या उन्हें छोटे कपड़े नहीं पहनने चाहिए। हम एक असभ्य समाज में रहते हैं, ऐसा समाज जहां स्त्रियों के प्रति हर सेकण्ड में कहीं न कहीं अपराध हो रहा होता है। जिन्हें आज तक कोई कानून नहीं रोक पाया है। जहां कुंठित मानसिकता वाले लोग घूरती आंखों से स्त्रियों को देखते हैं।

आज की नारी आधुनिकता के परिवेश में जी रही है। सामाजिक समस्याओं के अतिरिक्त उसे आर्थिक समस्याओं से भी जूझना पड़ रहा है। इसलिए उसे घर की जिम्मेदारियों के साथ–साथ नौकरी करनी पड़ रही है।

भारत में महिला सशक्तिकरण : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

अनेक बार इस भ्रामक धारणा का प्रचार किया गया है कि नारी अधिकारों का विमर्श पश्चिम की देन है,जिसने भारतीय समाज की समरसता को भंग किया है। यह सच है कि नारी मुक्ति एवं नारी अधिकार आन्दोलन व्यापक संगठित स्तर पर यूरोप में अमेरिका में प्रारंभ हुए एवं बाद में भारत समेत एशिया एवं अफ्रीका के देशों में लोकप्रिय हुए। किंतु इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि अन्य देशों में विशेष प्रयास नहीं हुए। भारतीय सन्दर्भ में इस तरह के प्रयासों की एक लंबी श्रृंखला है। दुर्भाग्य से इन प्रयासों की अपेक्षित जानकारी का अभाव है। भारतीय सन्दर्भ की जब चर्चा की जाती है तो भारतीय सांस्कृतिक धरोहर, उसमें नारी की उच्च, उत्कृष्ट, दैवीय छवि, परिवार संस्था की अक्षुणता एवं उनके फलस्वरुप सामाजिक संरचना की समरसता एवं स्थायित्व को मूल अधिकारों के रुप में विवेचित किया जाता है। इस तरह की विवेचनों में अक्सर ऐतिहासिक तथ्यों, अन्तर्विरोधों एवं परिवर्तन के तत्वों की अनदेखी कर दी जाती है। यही कारण है कि भारतीय सन्दर्भ में नारी समानता एवं अधिकारों के लिए किए गए अनेकानेक प्रयासों–सुधार आन्दोलनों, महिला आन्दोलनों एवं व्यक्तिगत योगदानों का समुचित मूल्यांकन नहीं हो पाया है।

अवश्य ही, विभिन्न शोधों से स्पष्ट हुआ है कि वैदिक युग में (सामान्यतः 2500 ईसापूर्व से 1500 ईसा पूर्ण तक) भारत में स्त्रियों की प्रस्थिति सभी क्षेत्र में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक समानता पर आधारित थी। वेदों की रचना में लगभग 200 श्लोकों का योगदान स्त्रियों का माना गया है। राजनैतिक सभाओं, क्रियाकलापों में भी स्त्रियों की सक्रिय सहभागिता का उल्लेख मिलता है उत्तर वैदिक युग के बाद सामाजिक संरचना में जटिलता, कठोरता, संकीर्णता, अपारदर्शी व्यवस्थाओं का उद्भव स्त्रियों की स्वतंत्रता का शनै–शनै हनन प्रारंभ हुआ। स्त्रियों की भूमिका को प्रजनन और पारिवारिकता तक सीमित किया जाने लगा तथा बाल–विवाह, बहुविवाह, दहेज, विधवा उत्पीड़न, पर्दा–प्रथा, सती–प्रथा जैसी कुप्रथाओं ने स्त्री को अधीन स्थिति में अवस्थित किया। बौध धर्म, जैन धर्म, सिख धर्म तथा बाद में कर्नाटक में लिंगायत एवं उत्तर भारत में भक्ति में इस स्थिति के विरुद्ध विद्रोह के स्वर उभरे। 19वीं सदी में उपजे व्यापक धर्म एवं समाज सुधार आन्दोलनों ब्रह्म समाज, आर्य समाज, प्रार्थना समाज, थियोसोफिकल सोसायटी, रामकृष्ण मिशनके अलावा अन्य संगठनों ने भारतीय समाज में पनप रही स्त्री पुरुष विषमता को चुनौती दी एवं सुधारात्मक प्रयास किए। स्वाधीनता आन्दोलनों में भी महिलाओं ने बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया।

ब्रिटिशकाल में महिलाओं की स्थिति को सुधारने के लिए व्यापक प्रयत्न किये गये। इस अवधि में समाज की अर्थिक एवं सामाजिक संरचनाओं में हुए परिवर्तनों के फलस्वरुप स्त्रियों के जीवन में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रुप से अनेक सुधारात्मक उपाय अपनाये गये। राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा के विस्तार, सामाजिक आन्दोलनों का उदय, औद्योगीकरण एवं महिला संगठनों आदि ने स्त्री–उद्धार की दिशा में व्यापक सुधार कार्य किये।

यद्यपि ब्रिटिश काल में स्त्री शिक्षा के उत्थान, संवैधानिक सुधारों एवं विभिन्न महिला संगठनों के प्रयासों के फलस्वरुप स्त्रियों की स्थिति में कुछ सुधार अवश्य हुआ। परन्तु सामाजिक परिवेश मे बाल–विवाह, दहेज–प्रथा, देवदासी–प्रथा, वेश्यावृत्ति आदि का प्रचलन व्यापक स्तर पर था। महिलाओं का शोषण और उत्पीड़न निरन्तर बढ़ रहा था। समाज आज भी अपनी परम्पराओं और रूढ़िवादिता से ग्रसित था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् पिछले 70 वर्षों में महिलाओं की स्थिति में युगान्तरकारी परिवर्तन आया है। इस समय भारत में स्त्री शिक्षा का व्यापक प्रसार हुआ। स्त्रियों ने बुनियादी शिक्षा के साथ व्यावसायिक शिक्षा को भी ग्रहण किया है। 2011 की जनसंख्या के अनुसार देश में स्त्रियों की साक्षरता का प्रतिशत 65.46 और पुरुषों में 82.14 है। शिक्षा के निरन्तर विकास से स्त्रियों को अपने व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के समुचित अवसर प्रदान किये है, साथ ही रूढ़िवादी परम्पराओं और सामाजिक बंधनों से मुक्त होने के लिए उन्हें प्रोत्साहित किया है। जिससे पर्दा–प्रथा,बाल–विवाह आदि कुरीतियों का प्रचलन कम हुआ है और सामाजिक जीवन में महिलाओं की सहभागिता में निरन्तर वृद्धि हुई है।

भारतीय संविधान में महिलाओं को सशक्त एवं सफल बनाने के लिए पुरुषों के समान अधिकार प्रदान किए गए हैं। संविधान द्वारा महिलाओं को मूल अधिकारों, नीति निर्देशकतत्वों, विभिन्न प्रावधानों एवं अधिनियमों के रुप में अनेकानेक अधिकार प्रदान किए गये हैं। यथा–सांविधान के अनुच्छेद 14 में विधि के समक्ष समता एवं विधि का समान संरक्षण का अधिकार, अनुच्छेद 15 में लिंग के आधार पर किसी भी तरह के भेदभाव को रोकने के व्यवस्था, अनुच्छेद16 में अवसर की समानता का अधिकार, अनुच्छेद 39 में स्त्री एवं पुरुषों के लिए समान वेतन अनुच्छेद 39 (क) में समान न्याय एवं निःशुल्क विधिक सहायता, अनुच्छेद 41 में काम व शिक्षा के अधिकार का उल्लेख है। इसी प्रकार अनुच्छेद 42 में राज्य द्वारा महिलाओं के लिए प्रसूति काल में राहत व्यवस्था तथा काम के स्थान पर मानवीय सुविधा का उपबन्ध किया गया है।

संवैधानिक उपबन्धों के अलावा भारतीय दण्ड संहिता 1860 में भी महिलाओं के विरुद्ध किए जाने वाले अपराधों की रोकथाम के लिए कठोर दण्ड की व्यवस्था की गयी है। धारा 354 में स्त्री की लज्जा भंग, धारा 366 में अपहरण, धारा 726 में बलात्संग और धारा 498 (क) में स्त्री का अपमान करने को दण्डनीय अपराध घोषित किया गया है। महिला अधिकारों एवं महिला सशक्तिकरण हेतु भारतीय संसद में भी समय–समय पर विभिन्न अधिनियम पारित किए है। यह अधिनियम विशिष्ट रुप से महिला अधिकारों को दृष्टिगत रखते हुए निर्मित किए गए है। 1994 में भारत सरकार ने पी.एन.डी.टी. नामक कानून बनाकर कन्या भ्रूण हत्या को कानूनन अपराध घोषित किया। महिलाओं को घरेलू हिंसा से संरक्षण प्रदान करने के लिए 2005 मे अधिनियम बनाया गया। इसके अन्तर्गत यह प्रावधान किया गया है कि घरेलू हिंसा की शिकार महिला संरक्षण अधिकारी, पुलिस अधिकारी, सेवा प्रदाता या मजिस्ट्रेट से शिकायत कर सकती है तथा चिकित्सा सहायता, प्रतिकर, निःशुल्क विधिक सहायता तथा अन्य उपलब्ध सेवायें प्राप्त कर सकती है। इसी प्रकार महिलाओं को दहेज रुपी दानव की बलि चढ़ने से रोकने हेतु सरकार द्वारा 1961 में दहेज प्रतिशेध अधिनियम बनाया जिसके अनुसार दहेज लेने और देने वाले को 5 वर्ष तक का कारावास और पन्द्रह हजार रुपये या दहेज के मूल्य की रकम के बराबर जो भी अधिक हो, जुर्माने से दण्डित किया जाएगा। यह अधिनियम बनने के पश्चात् भी दहेज उत्पीड़न व दहेज हत्या की घटनाओं में कोई कमी नहीं आयी है। दहेज का व्यापार और बढ़ता गया तथा दहेज हत्याओं का सिलसिला और बढ़ता गया। कानून विदों के मुताबिक ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि 1961 के दहेज प्रतिषेध अधिनियम में छेद रह गया था। अतः 1984 व 1986 में इस कानून को और पुख्ता किया गया।

इसी प्रकार महिलाओं के साथ होने वाले सबसे घृणित अपराध बलात्कार तथा यौन शौषण के विरुद्ध भी कई कानून बनाये गये है। भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 में बलात्कार को दण्डनीय अपराध माना गया है। बलात्कार के मामले में आजीवन कारावास से 10 वर्ष तक की जेल की सजा का प्रावधान है। धारा 228 बलात्कार पीड़िता को प्रेस रिपोर्टस जो पीड़िता का नाम व पहचान सार्वजानिक करती है, से रक्षा करती है। इसके लिए धारा 376 ए में 2 वर्ष तक की जेल की सजा का प्रावधान है।

महिलाओं के लिए बनाए गए अन्य अधिनियमों में मुख्य रुप से हिन्दू विवाह अधिनियम 1955, हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956, अनैतिक व्यापार अधिनियम 1956, मातृत्व लाभ अधिनियम 1976, स्त्रियों का अशिष्ट प्रस्तुतिकरण प्रतिषेध अधिनियम 1986, सती कर्म निवारण अधिनियम 1994 एवं बाल विवाह प्रतिषेध अधिनियम 2006 को शामिल किया जा सकता है।

महिलाओं के विरुद्ध अपराध : समाज एवं सरकार की निष्क्रियता

देश में यूं तो महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने के लिए सरकार की ओर से कानून बनाने के दावे तो किए जाते रहे है पर क्या ये कानून असल में भी मददगार होते हैं ? यह एक विचारणीय प्रश्न है कि क्या केवल कानून बना लेने मात्र से हम महिलाओं के विरुद्ध हो रही हिंसा से निजात पा लेंगे? शायद नहीं। भारतीय व्यवस्था का एक अद्भुत सच यह है कि चोरी के बाद यहां हायतौबा मचती है। पांच वर्ष पूर्व 16 दिसंबर, 2012 को जब निर्भया दुष्कर्म और हत्याकाण्ड हुआ था और उसके बाद पूरे देश में हल्ला हुआ। सरकार की नींद टूटी। नया कानून बना। अब सवाल यह उठता है कि क्या नए कानून बनाने से महिलाओं के विरुद्ध हो रहे लैंगिक अपराधों में कमी आई हैं और हम महिला समाज को सुरक्षित करने में कितने सफल हुए है ?

ऑकड़ों का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि प्रति 1 लाख महिलाओं पर वर्ष 2016 के दौरान महिलाओं के विरुद्ध प्रत्येक घण्टे में 55.2 अपराध होते हैं जिसमें 33 प्रतिशत महिला अत्याचार पति या अन्य रिश्तेदारों द्वारा। हर 4 घण्टे में एक महिला के साथ दुष्कर्म हो जाता है। समाज में आए दिन महिलाओं के

विरुद्ध होने वाले अपराधों की संख्या में हर दिन वृद्धि हो रही है। यह चिन्ता का विषय तो है लेकिन क्या सचमुच हमारी व्यवस्था, हमारी सरकारें या हमारा समाज इसके प्रति संवेदनशील और चिन्तित हैं ? पड़ताल करें तो हमें इसका उत्तर नकारात्मक ही मिलेगा। जो देश अपनी महिलाओं के बेखौफ सड़कों पर निकल जाने–भर को अपनी सुरक्षा व्यवस्था की एक उपलब्धि मानता हो। जिस देश के समाज में महिलाओं के खुलकर हंसने–बोलने को कदाचार माना जाता हो ? क्यों है ये हालात ? कोई नेता कभी दुष्कर्म की हिमायत करता नजर आ जाता हो या एक सनकी अपनी मुहब्बत का इजहार चाकू की नोंक से करता दिख पड़ता हो, या फिर कोई सिरफिरा अपने विफल प्रणय–निवेदनसे तिलमिलाया अपनी कथित प्रेमिका के चेहरे पर तेजाब फेंक देता हो, तो आश्चर्य कैसा ?

आश्चर्य तो तब होना चाहिये जब महिलाएं देश की संसद से अपना हक मांगें और देश की सत्ता में भागीदारी का उनका हक उन्हें बिना किसी हिला–हवाली के दे दिया जाए या जब महिलाएं अपनी जुबां खोले, तब कोई तथाकथित सेना उनके मत्थे पाँच करोड़ की सुपारी ना धर दे, या फिर कि जब कोई लड़की अपने प्यार का इजहार करे और अपना जीवन साथी स्वयं चुनना चाहे,तब कोई खाप पंचायत उसे सरे आम मारकर पेड़ पर लटका देने का फरमान जारी न करे, आश्चर्य तो तब होना चाहिये।

निष्कर्ष

आज यह विचारणीय प्रश्न है कि भारत का संविधान अपने जिस अनुच्छेद 14 और अनुच्छेद 15 (1) के जरिए महिलाओं को लिंग भेद किए बगैर जिस समानता को देने की बात करता है और अपने अनुच्छेद 21 के जरिए विशेषकर महिलाओं को बिना लैगिक भेदभाव के जीने का अधिकार प्रदान करता है, क्या सचमुच हमारा नारी समाज इस संवैधानिक लाभ का उपयोग कर पाता है ? क्या हमारी प्रतिबद्धता केवल सड़कों पर मोमबत्ती जलाकर मार्च निकालने तक ही सीमित है ?

फ्रांसीसी लेखिका सिमोन द बोउ आर ने कहा है, ''स्त्री पैदा नहीं होती, उसे बनाया जाता है। स्त्री अनुरुप गुण दरअसल, समाज और परिवार द्वारा लड़की में भरे जाते हैं। जन्म के समय लड़के और लड़कियों में समान ही गुण होते है।

मानव मनोविज्ञान कहता है, अपराध पर पूरी तरह से रोक असंभव है। लेकिन महिलाओं के प्रति दरिंदगी अब और नहीं। हालात बदलने होंगे। बेहतर कल के लिए 'आधे' हिस्से को उसका 'पूरा' वाजिब हक देना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *ममता जैतली एवं प्रकाश शर्मा, आधी आबादी का संघर्ष, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2006, पृ.196*
2. *प्रभा आप्टे, भारतीय समाज में नारी, क्लासिक पब्लिकेशन्स, जयपुर, 1966, पृ. 15*
3. *कमलेश कटारिया, नारी जीवनः वैदिककाल से आज तक, यूनिक ट्रेडर्स, जयपुर, 2003, पृ. 13*
4. *मनीषा, हम सभ्य औरतें, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002. पृ. 13–14*
5. *दैनिक नवज्योति, नवजात बेटी को तम्बाकू खिलाकर मारा, 11 अप्रैल, 2012, अजमेर*
6. *सरिता वशिष्ट, महिला सशक्तिकरण, के.के. पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2010, पृ. 50*
7. *कुसुम, वुमैन, मार्च टुवर्ड्स डिग्निटी : सोशियो–लीगल पर्सपैक्टिव, रिजेन्सी पब्लिकेशन्स,नई दिल्ली,1993, पृ. 9*
8. *मनीषा, हम सभ्य औरतें, उपर्युक्त, पृ. 90–91*
9. *राष्ट्र महिला (मासिक), राष्ट्रीय महिला आयोग, नई दिल्ली, वर्ष 3,अंक–18, अप्रैल, 2001, पृ. 1*
10. *गति–समाचार विचार मासिक पत्रिका, अलवर वर्ष–6, अंक–11, नवम्बर, 2012, पृ. 8*
11. *जनसत्ता, नाबालिग लड़की से पिता–भाई–चाचा ने किया दुष्कर्म, नई दिल्ली, 27, नवम्बर, 2012, पृ. 9*
12. *एम. के. मिश्रा, नारी शोषण, अर्जन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2010, पृ. 37*
13. *दिलीप जाखड़, मानव अधिकार और पुलिस संगठन, यूनिवर्सिटी बुक हाउस, जयपुर, 2000, पृ. 36 व 41*
14. *आशा कौशिक, मानवाधिकार और राज्य : बदलते संदर्भ उभरते आयाम, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर,2004, पृ. 195*
15. *योजना (मासिक), नई दिल्ली, वर्ष–50,अंक–7, अक्टूबर, 2006, पृ. 40*
16. *टी. पी. त्रिपाठी, मानव अधिकार, इलाहाबाद लॉ एजेन्सी, इलाहाबार, 2009, पृ. 130*
17. *उपर्युक्त, पृ. 128*
18. *हजीरा कुमार एवं जैमन वर्गीज, वुमैन्स, एमपॉवरमेन्ट : इश्यूज, चैलेन्जस एण्ड स्ट्रेटेजीज–ए सोर्स बुक, रिजेन्सी पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2005, पृ.107*
19. *टी. पी. त्रिपाठी, मानव अधिकार,उपर्युक्त,पृ. 128–131*
20. *राष्ट्र महिला (मासिक), उपर्युक्त, पृ. 1*
21. *आधी जमीन (त्रैमासिक),पटना, जनवरी–मार्च,2003,पृ. 14*
22. *राजस्थान पत्रिका, पुलिस ने छात्रा पर भांजी लाठियां, अलवर, 30 नवम्बर, 2012*
23. *आधी जमीन (त्रैमासिक), उपर्युक्त, पृ. 33*
24. *जनसत्ता, महिलाओं की सुरक्षा की परवाह नहीं बुलंदशहर पुलिस को, नई दिल्ली, 3 अक्टूबर, 2012*
25. *जनसत्ता, इंसाफ नहीं मिलने पर खुदकुशी के लिये मजबूर हो रहे लोग, नई दिल्ली, 9 नवम्बर, 2012*
26. *जनसत्ता, आश्रय में अनाचार नई दिल्ली, 5 दिसम्बर, 2012*
27. *राष्ट्र महिला (मासिक), उपर्युक्त, अक्टूबर, 2003*
28. *उपर्युक्त*
29. *उपर्युक्त, मार्च, 2004 पृ. 4*
30. *उपर्युक्त, अक्टूबर, 2003, पृ. 2*
31. *मनीषा, हम सभ्य औरतें, उपर्युक्त, पृ. 209*
32. *कादम्बिनी (मासिक), एच. एम. वी. एल. प्रकाशन, नई दिल्ली, मार्च, 2012 : पृ. 37*
33. *राष्ट्र, महिला (मासिक), उपर्युक्त, जनवरी, 2005, पृ.1*
34. *नासिरा शर्मा, औरत के लिये औरत, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 86*
35. *गति, उपर्युक्त, अंक–8, वर्ष–5, अगस्त,2011, पृ. 34*
36. *गति, उपर्युक्त, वर्ष–5, अंक–9–10, सितम्बर–अक्टूबर, 2012, पृ. 39*